संपादकीय

दीपावली का उत्सव या प्रदूषण का उत्सव?

दीपावली भारत का सबसे बड़ा सांस्कृतिक और धार्मिक पर्व है। यह अंधकार पर प्रकाश, असत्य पर सत्य और निराशा पर आशा की विजय का प्रतीक है। दीपावली का मूल संदेश घर-परिवार, समाज और प्रकृति में सुख, शांति एवं समृद्धि का प्रकाश फैलाना है। लेकिन दुर्भाग्य से पिछले कुछ वर्षों में इस पवित्र त्योहार का स्वरूप तेजी से बदलता दिखाई दे रहा है। दीपों की रोशनी और खुशियों के स्थान पर पटाखों का शोर, बारूद का धुआं और प्रदूषण का बढ़ता स्तर हमारी चिंता का विषय बन गया है। पहले दीपावली पर सीमित मात्रा में पटाखे फोड़े जाते थे। यह खुशी और उत्सव का एक छोटा-सा हिस्सा था, लेकिन अब दीपावली के पहले से लेकर ग्यारस तक पटाखे फोड़ने की होड़ लगी रहती है। इसे सनातन संस्कृति और धार्मिक गौरव से जोड़कर शक्ति प्रदर्शन का माध्यम बनाया जा रहा है। सवाल यह है कि क्या अपनी धार्मिक आस्था प्रदर्शित करने के लिए अपने और दूसरों के जीवन को संकट में डालना आवश्यक है? क्या पटाखों का अत्यधिक इस्तेमाल ही संस्कृति और परंपरा की पहचान बन गई है? केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के सामने आए आंकड़े इस खतरे की गंभीरता को बताते हैं। दीपावली के आसपास देश के अनेक शहरों में वायु गुणवत्ता सूचकांक (एक्यूआई) 350 से 400 के स्तर तक पहुंच गया। दिल्ली में भी एक्यूआई लगभग 376 दर्ज किया गया। बहादुरगढ़, जींद, अंबाला, गुरुग्राम, फरीदाबाद और कई अन्य शहरों में भी प्रदूषण का स्तर चिंताजनक रहा। बिहार, पंजाब और मध्य प्रदेश सहित कई राज्यों में इसका प्रभाव देखने को मिला। हवा में घुले जहरीले कण बच्चों, बुजुर्गों, सांस के मरीजों और सामान्य नागरिकों के स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा बन रहे हैं। सबसे दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह है कि गरीब और मध्यम वर्ग का मेहनत से कमाया हुआ पैसा कुछ घंटों की आतिशबाजी में बारूद का धुंआ बनकर उड़ जाता है। जिस धन का उपयोग बच्चों की शिक्षा, परिवार के स्वास्थ्य, जरूरतमंदों की सहायता और भविष्य की सुरक्षा में किया जा सकता है, वह धुएं में बदलकर नुकसान पहुंचा रहा है। कुछ क्षणों की चमक के बदले कई दिनों तक लोगों को प्रदूषित हवा में सांस लेने की मजबूरी झेलनी पड़ती है। इस पूरे विषय में धर्म के ठेकेदारों और व्यवस्था के जिम्मेदार लोगों को भी आत्ममंथन करना चाहिए। धार्मिक स्वतंत्रता का अर्थ यह नहीं हो सकता, किसी नागरिक के स्वच्छ हवा में सांस लेने के अधिकार की अनदेखी की जाए। न्यायपालिका, केंद्र सरकार, राज्य सरकारों और स्थानीय निकायों की जिम्मेदारी है, पर्यावरण संरक्षण के नियमों का निष्पक्ष और प्रभावी पालन कराएं। न्यायिक निर्णयों में भी आस्था के साथ-साथ जनस्वास्थ्य और संविधान द्वारा प्रदत्त जीवन के अधिकार को सर्वोच्च महत्व मिलना चाहिए। प्रदूषण का दुष्प्रभाव केवल मनुष्य तक सीमित नहीं है। पटाखों का धुआं, तेज आवाज और रासायनिक अवशेष पशु-पक्षियों, छोटे जीवों और प्राकृतिक पर्यावरण को भी प्रभावित करते हैं। इससे प्रकृति का जैविक संतुलन बिगड़ता है। दीपावली के नाम पर हम जिस प्रकृति से जीवन प्राप्त करते हैं, उसी को नुकसान पहुंचाना कैसी धार्मिक विजय है? अब समय आ गया है, समाज स्वयं अपनी जिम्मेदारी समझे। धर्म, आस्था, करुणा, संयम और सहअस्तित्व की शिक्षा देता है। शक्ति प्रदर्शन, दूसरों को कष्ट पहुंचाने के लिए हो इसे कहीं से भी जायज नहीं ठहराया जा सकता है। दीपावली पर दीप जलाएं, मिठाइयां बांटें, जरूरतमंदों की सहायता करें, पर्यावरण को सुरक्षित रखने का संकल्प के साथ मनाने का त्यौहार है। पटाखों पर नियंत्रण केवल सरकार या न्यायपालिका की जिम्मेदारी नहीं, बल्कि प्रत्येक नागरिक का सामाजिक दायित्व है। दीपावली का वास्तविक अर्थ ज्ञान के अंधकार को मिटाना है, हवा में जहर घोलना नहीं। यदि हमारी खुशियों के कारण किसी बच्चे को सांस लेने में तकलीफ हो, किसी बुजुर्ग का स्वास्थ्य बिगड़े या करोड़ों जीवों की जान चली जाए तो हमें अपनी परंपराओं और उत्सव को मनाने के तरीकों पर पुनर्विचार करना होगा। आखिर धर्म और संस्कृति का उद्देश्य जीवन को बेहतर बनाना है, जीवन को खतरे में डालना नहीं. इसे सभी को जिम्मेदारी के साथ समझना होगा।

लव यू जिंदगी

नौ साल की स्याति बार बार अपनी माँ के चेहरे को देख रही थी। वह महसूस कर रही थी कि कुछ तो है जो माँ कह नहीं पा रही है, बता नहीं पा रही ,पर बताना भी चाहती है। उसनें सोचा मैं और मम्मा तो गुड़ फ्रेंड हैं। सब कहतें हैं कि स्याति की माँ सपना सचमुच भगवान द्वारा बनाया सुंदरतम सपना है। वह खुद कई बार चिढ़ाती भी है माँ आप तो बिल्कुल विज्ञापन वाली माँ जैसी दिखती हैं, वो है ना(आप का चेहरा मेरे लिए लक्की है) वाली।।

नानी कहती है छोटी सपना /बड़ी सपना।एक दूजे की कार्बन कापी।पर आज माँ का चेहरा अनजान लग रहा है,थोड़ा थोड़ा ड़रावना भी। उसने हिम्मत करके माँ का चेहरा हाथ में लेकर पूछा, आर यू ओके माँ। तभी दरवाजे की घंटी बजी और दरवाजा खोलने पर स्याति ने देखा कि पापा नानू नानी को लेकर आए हैं ।स्याति नानी से लिपट गई।सब खुश हुए और नानू स्याति के साथ कमरे मे लूडो खेलने लगे।। नानी और माँ अलग कमरे मे दरवाजा बंद कर बैठ गए। आधे घंटे के बाद स्याति ने दरवाजा खोला तो देखा माँ नानी की गोद मे सो रही थी ।नानी ने इशारे से उसे अपने पास बुलाया। स्याति ने देखा माँ का चेहरा अब रोज की तरह नार्मल लग रहा था ,पर नानी का चेहरा कुछ कुछ मम्मा जैसा लग रहा था।तकिए के नीचे एक कागज फड़फड़ा रहा था उस मेडिकल रिपोर्ट पर माँ का नाम व केंकड़े का साईन था।ओह मिस्स कैंसर। स्याति और नानी की नजरे मिली ।नानी ने प्यार और विश्वास से देखा। फिर कान में कुछ कहा। स्याति दौड़ कर ड्राईंग की कापी लाई। नानी ने धीरे से सपना को चादर ओढ़ाई और स्याति के साथ बाहर आई छोटी सपना ने बड़ी सपना के लिए नानी के साथ मिलकर बिना बताये वाली सपना के क्यूट से स्केच बनाए और लिखा 'लव यू आलवेज 'क्यूटीपाई। माँ और बेटी , ...बेटी और माँ ।कुछ तस्वीरें



दीवारों पर लगा दीं। जब सपना की आँखे खुलीं, देखा ,पहले रोई व फिर तीनों ने एक दूसरे को घेरा और खूब हँसे। दूसरे कमरे से नानू और पापा ने आकर घेरा बडा बना दिया । सब ताल मे गाने लगे '' लव यू जिंदगी

' मौलिक व स्वलिखित हि।

डा. नीना छिब्बर
जोधपुर

और दीप जल उठे

कहानी

कस्तूरी सेठ नारायण दास व लक्ष्मी की हवेली के झरोखों से सुबह की धूप ऐसे उतरती थी, मानो सोने की थाली में केसर घुल रही हो। उस घर में दीपावली केवल त्योहार नहीं, वैभव का उत्सव थी, वैभव यानी लक्ष्मी का छोटा भाई । जीवन के इस उजले पक्ष के बीच लक्ष्मी ने कभी सोचा भी नहीं था कि एक दिन ऐसा आएगा, जब घर में दीप जलाने के लिए तेल जुटाना भी मुश्किल होगा। नारायणदास का परिवार पिता कारोबार और प्रतिष्ठा के लिए जाना जाता था। नारायण के पिता कहा करते थे, 'बेटा, धन चला जाए तो लौट सकता है, लेकिन विश्वास चला जाए तो आदमी खाली हाथ रह जाता है।' सब ठीक चल रहा था लेकिन पिता की मृत्यु के बाद पुश्तैनी कारोबार बँटा । नारायणदास के चेहरे पर भी वर्षों बाद मुस्कान लौटी। सरस्वती मुस्कुरा कर बोली, 'बाबूजी, रोशनी पूरी न सही, लेकिन अँधेरा भी अब नहीं रहा।' नारायण ने बेटी के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, 'बेटी, आज तुने इस अँधेरे घर में केवल कुछ बल्ब नहीं जलाए, हमारे बुझते हुए हौसलों में भी ली जगा दी है। 'उस दिन उन चंद बल्बों ने घर को जितनी रोशनी दी, उससे कहीं अधिक उम्मीद जगा दी। समय बीतता गया। सरस्वती ने सब्जियों के ठेले पर बैठकर बाजार की नब्ज पहचाननी शुरू कर दी। उसे समझ आने लगा कि पिता की मेहनत में कमी नहीं, कारोबार के नए तौर-तरीकों की कमी थी। उधर कुबेर ने वित्त और लेखांकन की पढ़ाई चुनी। दोनों ने तय कर लिया कि जिस अभाव में उनका बचपन बीता, वह उनके माता-पिता का भविष्य नहीं बनेगा। पढ़ाई पूरी होने पर कुबेर को एक वित्तीय संस्था में काम मिला। अपनी योग्यता और ईमानदारी से उसने अच्छी पहचान बनाई। बाद में उसने अपना फाइनेंस कंसल्टेशनऔर ऑडिट का काम शुरू कर दिया। छोटे व्यापारियों को कर और निवेश संबंधी सलाह देते हुए उसका काम बढ़ता गया। सरस्वती ने पिता के ठेले को ही अपनी पहली प्रयोगशाला बनाया। उसने किसानों से सीधे सब्जियाँ खरीदनी शुरू कीं और मोबाइल पर ग्राहकों के समूह बनाए। फिर एक छोटी वेबसाइट बनाकर ऑनलाइन ऑर्डर लेने लगी। शुरुआत में वह खुद थैले तैयार करती और साइकिल से सामान पहुँचाती थी। धीरे-धीरे घरों, छात्रावासों और छोटे होटलों से ऑर्डर मिलने लगे। ग्राहकों को ताजी सब्जियाँ मिलने लगीं और किसानों को उचित दाम। कारोबार बढ़ा, कर्मचारी जुड़े और फलों की



बिक्री भी शुरू हो गई। उसका स्टार्टअप दूसरे शहरों तक पहुँच गया। जिस लड़की ने कभी पढ़ाई लड़ी में रोशनी लौटाई थी, वह अब अपने हुनर से एक नई दुनिया रोशन कर रही थी। इस बीच लक्ष्मी को बेटी के विवाह की चिंता सताने लगी। उसके मन में एक सवाल बार-बार उठता– बेटी के जाने के बाद उनका क्या होगा? वह बच्चों पर बोझ नहीं बनना चाहती थी। गरीबी ने उसे सिखा दिया था कि वैभव की सबसे ऊँची अटारी से भी आदमी नीचे गिर सकता है। सरस्वती ने माँ की चिंता भाँप ली। उसने अपने माता-पिता के लिए घर खरीदा और उनके नियमित खर्च, चिकित्सा और देखभाल के लिए भी व्यवस्था कर दी। जब सरस्वती ने मकान के कागज माँ बाप के हाथों में सौंपे तो लक्ष्मी की आँखें भर आईं। उसे अपनी पुरानी हवेली याद आ गई, जिसके बड़े दरवाजे कभी उसके वैभव की पहचान थे। आज सामने एक छोटा-सा घर था, मगर उसकी नींव बेटी की मेहनत और प्रेम पर रखी गई थी। वह भावुक होकर बोली, 'बेटी, तूने तो हमारा बुझपन खरीद लिया।' सरस्वती मुस्कराई, 'नहीं माँ, बस वह चिंता लौटा दी है, जो आपने हमारी पढ़ाई के लिए अपने हिस्से रख ली थी।' लक्ष्मी ने बेटी को गले लगा लिया। उस आलिंगन में एक पुरानी सामाजिक धारणा का उत्तर भी छिपा था–बेटियाँ पराया धन नहीं होतीं; कई बार वही माता-पिता की सबसे बड़ी पूँजी बन जाती हैं।

फिर एक दीपावली आई। इस बार घर की छत से दरवाजे तक रंग-बिरंगी झालरें लगीं थीं। आँगन में मिट्टी के दीपक जल रहे थे। रसोई मिठाइयों की सुगंध से महक रही थी। लक्ष्मी दरवाजे पर खड़ी रोशनी निहार रही थी। अचानक उसे बरसों पुराना वह क्षण याद आ गया, जहाँ एक फ्यूज लड़ के कुछ बल्ब जले थे। उसने सरस्वती को पास बुलाया। 'याद है, उस दिवाली तुमने पुरानी झालर ठीक की थी? घर में बस दो-चार बल्ब जले थे। तुम्हारे चाचा के लड़के ने हँसकर कहा था–फ्यूज लड़ी ही फ्यूज लड़ी को जगमगाने का सपना देख रही है! इससे क्या होगा?' सरस्वती हँस पड़ी, 'लेकिन माँ, उन फ्यूज बल्बों के बीच कुछ बल्ब तो जले थे।'

लक्ष्मी ने बेटी की ओर देखा, 'तब समझी थी कि तूने घर में रोशनी की है। आज समझती हूँ कि तूने तो हमारी जिंदगी की वायरिंग ही बदल दी।' नारायणदास भी पास आकर खड़े हो गए। उन्हें पिता की सीख याद आई–विश्वास मत खोना। उन्होंने विश्वास बचाया था, भले ही धन खो दिया था। उनकी बेटी ने उसी ईमानदारी को बुद्धि, तकनीक और परिश्रम का सहारा देकर परिवार की ताकत बना दिया था। लक्ष्मी ने आँगन में रखे मिट्टी के दीपकों को देखा। एक दीपक की लौ हवा से काँपी, कुछ क्षण डगमगाई, मगर फिर स्थिर हो गई। उसे लगा, जैसे यह लौ उसके अपने जीवन की कहानी कह रही हो। कभी बुझ जाने के कगार पर पहुँची जिंदगी आज फिर जगमगा उठी थी। नारायण का विश्वास, कुबेर की सफलता और सरस्वती की बुद्धि–तीनों ने मिलकर उस घर में ऐसा उजाला किया था, जिसे अब किसी आँधी का भय नहीं था। लक्ष्मी ने दीपक के सामने हाथ जोड़ दिए। उसे समझ आ गया था कि जीवन में अँधेरा धन की कमी से ही नहीं आता और उजाला केवल धन से नहीं होता। उसके लिए विश्वास, विवेक और परिश्रम के दीप भी जलाने पड़ते हैं। सरस्वती की मेहनत, कुबेर के कौशल और नारायण लक्ष्मी के विश्वास से अँधेरे घर में खुशहाली के दीप फिर जल उठे थे।

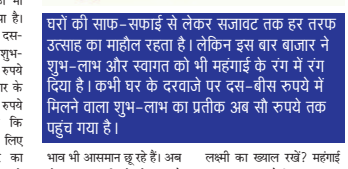
डॉ. घनश्याम बादल

शुभ-लाभ भी महंगे, स्वागत भी महंगा

व्यंग्य वक्रासन

एक आम आदमी की दीपावली यानि खर्चों की फेहरिस्त का जुबां की तरह लम्बी होना। ये घर का मुखिया ही जानता हैं कि उसे किस मद में कटोती करनी है और किसमे नहीं? दीपावली का त्योहार आते ही बाजारों में रौनक दिखाई देने लगती है। घरों की साफ-सफाई से लेकर सजावट तक हर तरफ उत्साह का माहौल रहता है। लेकिन इस बार बाजार ने शुभ-लाभ और स्वागत को भी महंगाई के रंग में रंग दिया है। कभी घर के दरवाजे पर दस-बीस रुपये में मिलने वाला शुभ-लाभ का प्रतीक अब सौ रुपये तक पहुंच गया है। बंदनवार के दाम 80 से लेकर 1400 रुपये तक सुनकर लगता है कि लक्ष्मीजी के स्वागत के लिए अब जेब में भी कुबेर का खजाना होना चाहिए। ऊपर से ओम, स्वास्तिक, श्री यंत्र और कलश जैसे शुभ प्रतीकों के भाव भी आसमान छू रहे हैं। अब तो आम आदमी सोचने लगा है कि घर में लक्ष्मीजी का स्वागत करें या पहले दुकानदार की लक्ष्मी का ख्याल रखें? महंगाई का आलम यह है कि शुभ-लाभ खरीदने से पहले भी आदमी को अपना बजट देखना पड़ रहा है। लगता है कि बाजार ने शुभ को भी प्रीमियम और लाभ को भी महंगे पैकेज में बेचने का फैसला कर लिया है। मजेदार बात यह है कि बाजार में ग्राहक कम हैं, लेकिन उम्मीदें बड़ी हैं। दुकानदारों को लगता है कि दीपावली पर लोग दिल खोलकर खरीदारी करेंगे। मगर ग्राहक भी अब समझदार हो गया है। वह बंदनवार देखकर घर की चौखट नापता है और कीमत सुनकर अपनी जेब की औकात। अब तो लगता है कि आने वाले समय में दुकानदार शुभ-लाभ के साथ एक चेतावनी भी टांग देंगे– 'सावधान! यहां शुभ भी महंगा है और लाभ भी आपकी जेब देखकर मिलेगा।' वैसे लक्ष्मीजी से हमारी प्रार्थना है कि इस बार घर में भले ही सादा बंदनवार लगे, लेकिन महंगाई की बंदनवार जरूर उतार दीजिए। आखिर आम आदमी को भी कभी तो सच्चे शुभ-लाभ का अनुभव तो हो!





घरों की साफ-सफाई से लेकर सजावट तक हर तरफ उत्साह का माहौल रहता है। लेकिन इस बार बाजार ने शुभ-लाभ और स्वागत को भी महंगाई के रंग में रंग दिया है। कभी घर के दरवाजे पर दस-बीस रुपये में मिलने वाला शुभ-लाभ का प्रतीक अब सौ रुपये तक पहुंच गया है।

संजय एम तराणेकर
इन्दौर-मो. 98260 25986

कहानी

फरिश्ता



कॉलबेल की आवाज सुनकर उसने दरवाजा खोला था। सामने अमित खड़ा था। उसका पूर्व प्रेमी। वह किसी बुरी आशंका से सिर से पांव तक कांप उठी थी। 'कैसी हो सुजाता?' अमित के चेहरे पर फीकी मुस्कान थी। 'ठीक हूँ! लेकिन तुम.....????' उसने कुछ कहना चाहा था। 'इंटरव्यू देने आया था। सोचा तुमसे मिल लूँ, और.....!' 'और तुम्हारे सुखमय वैवाहिक जीवन में आग लगा दूँ।' अचानक बिफर पड़ी थी सुजाता, ' मैंने शादी के पूर्व ही तुमसे हाथ जोड़ कर विनती की थी, अमित! जब हमारा-तुम्हारा मिलन नहीं हो सका तो भगवान के लिये मेरे वैवाहिक जीवन की ओर भूलकर भी नहीं देखना। मुझे.....मुझे भूल जाना। सोचना, तुम्हारे जीवन में सुजाता नाम की कोई लड़की आई ही नहीं थी। .....और अगर आई भी थी तो मर गई। लेकिन.....लेकिन तुम नहीं माने। आ ही गये न अपनी औकात पर?.....जाओ! जाकर बता दो मेरे पति को कि सुजाता मेरी प्रेमिका रह चुकी है।.....आग लगा दो मेरे सुखी जीवन में।' उसने दरवाजा बंद करना चाहा, लेकिन बीच में ही रोक लिया अमित ने। बोला, ' मेरी बात तो सुन लो सुजाता! उसके बाद जो कहना चाहो कह लेना। मैं तुम्हारी किसी बात का बुरा नहीं मानूँगा। .....मैं.....मैं तुम्हारे सुखी जीवन में खलल डालने नहीं आया हूँ। .....मैं तो तुम्हारी तस्वीर लौटाने आया हूँ, जो कभी तुमने मुझे दी थी..... तुम्हारे लिखे प्रेमपत्र तो मैंने जला डाले..... लेकिन.....लेकिन इसे नहीं जला पाया।' उसने अपनी जेब से तस्वीर निकाल कर सुजाता के हाथों में थमाते हुये कहा, ' हो सके तो मुझे माफ़ कर देना।..... मैं.....मैं .....वादा करता हूँ, उस गली से भी कभी नहीं गुजरूँगा, जिस गली में तुम्हारे कदम पड़ेंगे।' वह मुड़ा था और भारी क़दमों से वापस लौट चला था। सुजाता अवाक् खड़ी रह गई थी।

ब्रह्मदेव बन्धु संपर्क-हवेली खड़गपुर,
मुंगेर (बिहार)पिन-811213

कहानी

विकास का डीप-फेक

विकास आज भी आजकल बड़ा आधुनिक हो गया है। हकीकत चाहे जैसी हो, उसकी तस्वीर इतनी चमकदार होनी चाहिए कि देखने वाला अपनी बदहाली भूलकर विकास की वाहवाही करने लगे। इसे ही शायद विकास का डिजिटल अवतार या कहें तो विकास का डीप-फेक कहा जा सकता है। जमीन पर गड्ढे हैं और फाइलों में आसमान छूते आंकड़े। जनता सड़क पर धूल फाँक रही है और मंत्री जी प्रोजेक्टर पर सिंगापुर दिखा रहे हैं। शहर की सड़क पर निकलते ही ऐसा लगता है मानो वाहन नहीं, बल्कि किसी बाधा दौड़ प्रतियोगिता में हिस्सा ले रहे हों। कहीं गड्ढा है, कहीं उखड़ी सड़क, कहीं अधूरा निर्माण और कहीं महीनों से पड़ा मलबा। ट्रैफिक नियमों का कोई भी पालन नहीं कर रहा और ट्रैफिक के भंवर में फंसा इंसान अपनी किस्मत को रो रहा है।

असल में विकास का नया गणित बड़ा निराला है। सड़क की लंबाई कितने किलोमीटर बनी, यह बताया जाता है; कितने किलोमीटर उखड़ी, इसका हिसाब रखने की जरूरत नहीं समझी जाती। कितने पुलों का लोकार्पण हुआ, इसकी खबर प्रमुखता से छपती है; कितने पुलों की मरम्मत बाकी है, यह खबर अक्सर फुटनोट में भी जगह नहीं पाती। कितनी योजनाएँ स्वीकृत हुईं, कितनी राशि आवंटित हुई और कितने शिलान्यास हुए, इनका पूरा ब्योरा उपलब्ध है; लेकिन कितनी योजनाएँ समय पर पूरी हुईं और आम आदमी को उनसे कितना लाभ मिला, यह पूछना शायद विकास की छवि खराब करना है। प्रगति का पैमाना भी बदल गया है। अब किसी शहर के विकास को उसकी साफ-सफाई, यातायात व्यवस्था, पेयजल, सार्वजनिक परिवहन और नागरिक सुविधाओं से नहीं, बल्कि उसके स्वागत द्वार, चमकदार लाइटिंग, बड़े-बड़े होर्डिंग और भव्य समारोहों से मापा जाने लगा है। सरकारी आयोजनों में विकास की ऐसी तस्वीर पेश की जाती है कि लगता है देश की हर समस्या का समाधान हो चुका है। मंच पर आंकड़ों की आतिशबाजी होती है, स्क्रीन पर चमचमाते शहर दिखाई देते हैं और भाषणों में भविष्य की ऐसी उड़ान भरी जाती है कि वर्तमान की दुर्दशा जमीन पर ही छूट जाती है। जनता को बताया जाता है कि हम विश्वस्तरीय सुविधाओं की ओर बढ़ रहे हैं। जनता मन ही मन पूछती है कि साहब, विश्वस्तरीय सुविधाएँ आने तक क्या हम गड्ढों के बीच ही विश्व भ्रमण करते रहें? सड़क सुरक्षा के सरकारी आंकड़े ही इस चमकदार तस्वीर के सामने कुछ असहज सवाल खड़े करते हैं। सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्रालय की



रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2023 में देशभर में 4,80,583 सड़क दुर्घटनाएँ हुईं और 1,72,890 लोगों की जान गई। इनमें राष्ट्रीय राजमार्गों पर ही 63,112 मौतें दर्ज की गईं। यह भी ध्यान रखना होगा कि सभी दुर्घटनाओं का कारण सड़क के गड्ढे नहीं हैं, लेकिन ये आंकड़े सड़क सुरक्षा और बुनियादी ढाँचे की जवाबदेही को गंभीरता से लेने की आवश्यकता अवश्य बताते हैं। अब तो विकास का एक नया मॉडल भी चल पड़ा है। पहले समस्या पैदा होती थी, फिर उसका समाधान खोजा जाता था। अब पहले समाधान का विज्ञापन तैयार होता है, फिर समस्या को समझने के लिए बैठक बुलाई जाती है। किसी मोहल्ले में पानी नहीं आ रहा हो तो वहां जलापूर्ति सुधारने की योजना के पोस्टर लग जाते हैं। अस्पताल में डॉक्टर न हों तो स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार की घोषणा हो जाती है। स्कूल में शिक्षक कम हों तो डिजिटल शिक्षा का अभियान शुरू कर दिया जाता है। यानी सुविधा उपलब्ध कराने से पहले सुविधा की ब्रांडिंग जरूरी हो गई है। और डिजिटल युग में तो विकास का डीप-फेक बनाना और भी आसान है। एक तस्वीर में टूटी सड़क को चमचमाती सड़क में बदला जा सकता है, खाली मैदान को स्मार्ट सिटी के रूप में दिखाया जा सकता है और अधूरे पुल पर डिजिटल रंग-रोगन करके उसे आधुनिकता का प्रतीक बनाया जा सकता है। सोशल मीडिया पर ऐसी तस्वीरें देखकर लगता है कि देश में समस्याएँ नहीं, केवल कैमरे के एंगल की कमी है। जनता भी अब धीरे-धीरे समझने लगी है कि विकास की असली तस्वीर मोबाइल स्क्रीन पर नहीं, अपने आसपास देखनी चाहिए। सबसे मजेदार बात यह है कि विकास की आलोचना करने पर आलोचक को ही विकास विरोधी घोषित कर दिया जाता है। यदि कोई गड्ढा दिखाए तो उसे नकारात्मक सोच वाला कहा जाता है। यदि कोई सड़क की गुणवत्ता पूछे तो उसे व्यवस्था पर अविश्वास करने वाला बताया जाता है। यदि कोई खर्च का हिसाब मांगे तो उसे उपलब्धियों का सम्मान करना सीखने की सलाह दी जाती है।

अब जनता यह भी पूछने से पहले सोचती है कि कहीं सड़क का गड्ढा दिखाना राष्ट्र की छवि पर प्रश्नचिह्न तो नहीं लगा देगा ! दरअसल, विकास का अर्थ केवल नई इमारतें, चौड़ी सड़कें, ऊँचे पुल और आकर्षक योजनाएँ नहीं है। विकास का वास्तविक अर्थ है आम आदमी के जीवन में सुविधा, सुरक्षा, सम्मान और अवसरों का विस्तार। चमकदार इमारतों के बीच यदि गरीब को छत नहीं, अस्पतालों के बीच मरीज को इलाज नहीं, विद्यालयों के बीच बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा नहीं और रोजगार के आंकड़ों के बीच युवा को काम नहीं मिलता, तो विकास की परिभाषा पर पुनर्विचार आवश्यक है। विकास अब एक ऐसा जादुई चश्मा बन गया है, जिसे पहनकर भूखा आदमी भी खुद को फाइव-स्टार होटल में डिनर करता हुआ महसूस करता है। फर्क सिर्फ इतना है कि होटल में खाना डिखाई देता है, जबकि यहां केवल मेन्यू दिखाया जाता है। इसलिए अब वक्त आ गया है कि विकास के इस डीप-फेक से बाहर निकलकर असली तस्वीर देखी जाए। क्योंकि देश को प्रोजेक्टर पर सिंगापुर दिखाने वाले नहीं, जमीन पर सुरक्षित सड़क, स्वच्छ पानी, बेहतर अस्पताल और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने वाले विकास की जरूरत है। जनता को विकास की तस्वीर नहीं, विकास का अनुभव चाहिए। उसे आंकड़ों की उड़ान नहीं, जमीन पर परिणाम चाहिए। आखिर गड्ढों में गिरकर तालियाँ बजाना भी कोई आधुनिक नागरिकता नहीं है!

डॉ. मनीष दवे, महालक्ष्मी नगर, इंदौर